इमाम मुहम्मद तक़ी अ० और इमाम अली नक़ी अ०

प्रोफ़ेसर अल्लामा अली मुहम्मद नक़वी साहब क़िब्ला
अनुवादकः बिन्ते ज़हरा नक़वी "नदल हिन्दी" साहेबा

इमामे मुहम्मद तक़ी : ताजदारे तक़्वा

आपका नाम मुहम्मद बिन अली है मगर इमामे जवाद या इमामे तक़ी के लक़ब से मशहूर हैं। आपको "अबु जाफ़रे सानी" भी कहा जाता है। आप आसमाने विलायत व इमामत के नवें चमकदार सितारे हैं। आपकी विलादते बा सआदत 195हि० में हुई। आपने अपनी इमामत का आग़ाज़ नौ साल की उम्र में किया।

एक शक का जवाब

इमाम ने किस तरह नौ साल की उम्र में उम्मत की रहबरी की ज़िम्मेदारियाँ अपने ज़िम्मे लीं? और ये किस तरह मुमकिन है कि इतनी कम उम्री में वह उम्मत की रूहानी, तहज़ीबी और सियासी ज़िम्मेदारी को पूरा कर सकें?

इस सवाल के जवाब में हमें इमामत के इरफ़ानी और मावराए तबीआत अबआ़द पर नज़र रखनी होगी। अइम्मा और अम्बिया तजल्ली फ़ैज़े ख़ुदावन्दी हैं जो ख़ुदावन्दे तआला के मख़सूस अलताफ़ से बहरावर होते हैं। ख़ुदा की इनायात से इमाम पैदाइश के वक़्त ही से ख़ास मलका, ग़ैर मामूली रूहानी ताक़तों का हामिल होता है। इमाम और नबी चूँकि बराहे रास्त इल्मे इलाही और इनायते मख़सूस के चश्मे से फ़ैज़याब होते हैं इसलिए "इल्मे वहबी" के मालिक होते हैं और हवासे ख़म्सा और तरबियत के अलावा इल्म और मारेफ़त के दूसरे चश्मों तक भी उनकी रसाई होती है और उनका मुक़ाबला आम इन्सानों के साथ नहीं किया जा सकता, क्योंकि जो शख़्स सूरज की रौशनी अपनी आँखों से देख चुका हो वह इस बात का मुहताज नहीं होता कि कोई उसे सूरज के निकलने की ख़बर पहुँचाए। ऐसी सूरत में अगर अइम्मा में से कोई इमाम नौ साल की कमसिनी में ही इमामत के ओहदे पर फ़ाएज़ हो जाता है तो इसमें ताज्जुब की कोई बात नहीं है।

क़ुरआने करीम हज़रत ईसाअ० के बारे में बताता है कि वह गहवारे में भी नबी थे और उन्होंने अपनी नुबुव्वत का एलान ख़ुद इन अलफ़ाज़ किया थाः- "मैं ख़ुदा का बन्दा हूँ और मुझे किताब और नुबुव्वत अता हुई है।" (सूर-ए-मरियम-30)

अइम्मा भी इसी सिन्फ़ से हैं, इसलिए कम से कम किसी मुसलमान को ये बात समझने में कोई दुश्वारी पेश नहीं आना चाहिए कि इमाम मुहम्मद तक़ीअ० नौ साल की उम्र में इमामत के ओहदे पर किस तरह फ़ायज़ हो गये।

हमारे बारह इमामों में इमाम मुहम्मद तक़ीअ० ने उम्र के लेहाज़ से इस दुनिया में बहुत कम दिन गुज़ारे। जब उन्हें ज़हर दिया गया, उस वक़्त उनकी उम्र सिर्फ़ पच्चीस बरस थी (195हि० से 220हि० तक) मगर ये ज़िन्दगी जिस क़दर भी है, एक "क़ुव्वत" है एक "ताक़त" है और इसका राज़ ज़िन्दगी के मेयार में है न कि मिक़दार में। क्योंकि इसका पैमाना ज़िन्दगी के साल की गिन्ती नहीं है बल्कि ज़िन्दगी किस उनवान से गुज़री है। हो सकता है कि किसी ने इमाम जवादअ० की तरह से मुख़तसर ही ज़िन्दगी गुज़ारी हो मगर मेयार और तासीर के लेहाज़ से लाखों इन्सानों की सालहा साल की ज़िन्दगी से कहीं ज़्यादा हो।

इमाम मुहम्मद तक़ीअ० का दौर मुख़तसर होने के बावजूद निहायत तलातुमख़ेज़ लेकिन समरबार था। नवें इमाम का दौर 203हि० से 220हि० तक है। ये दौर परेशानियों और मुसीबतों का दौर था जो शियों की आज़ादी के दौर के बाद शुरु हुआ।

उस ज़माने के सियासी हालात

उस ज़माने में शिया इस्लामी दुनिया में सबसे बड़ी इन्क़ेलाबी ताक़त और हुकूमते वक़्त के लिए अज़ीम

तरीन ख़तरा समझे जाते थे और लाखों की अवाम में अइम्म-ए-अहलेबैत की मक़बूलियत हुकूमत को ख़ौफ़ज़दा कर रही थी।

इमाम मुहम्मद तक़ीअ॰ की इमामत से चन्द साल पहले इराक़ में शियों की ज़बरदस्त तहरीक की शुरुआत हुई। जमादिस्सानी 199हि॰ के अवाख़िर में सादाते हुसैनी में से, मुहम्मद बिन इब्राहीम ने जो इब्ने तबातबाई के नाम से मशहूर हैं, कूफ़ा में एक ज़बरदस्त इन्क़ेलाब की रहबरी की। ये लोग 199हि॰ के माह रजब में इस क़दर मज़बूत और मुनज़्ज़म हो गये थे कि ज़ुहैर बिन मुसैय्यिब की सरकरदगी में हुकूमत की जो फ़ौज उनकी सरकोबी के लिए गई थी, उसे इन लोगों ने बुरी तरह मार भगाया। 200हि॰ में सरज़मीने हेजाज़ पर मुहम्मद दीबाज़ बिन इमाम जाफ़रे सादिक़अ॰ की सरकरदगी में शियों ने इन्क़ेलाब बरपा किया और कुछ अरसे तक इस इलाक़े पर अपनी हुकूमत क़ायम रखी। 202हि॰ में कूफ़ा में एक दूसरी हमागीर तहरीक उभरी जिसकी रहबरी अब्दुल्लाह, अबी सराबा के भाई कर रहे थे और इस तहरीक के पुश्तपनाह भी शिया ही थे इनकी मानवी रहबरी के फ़राएज़ अली बिन मुहम्मद बिन इमाम जाफ़रे सादिक़अ॰ अन्जाम दे रहे थे।

यमन में भी शिया तहरीकें ज़ोर पकड़ रही थीं। 200हि॰ में इब्राहीम बिन इमाम मूसा काज़िमअ॰ ने ज़बरदस्त इन्क़ेलाब बरपा किया और पूरे यमन में अलवियों की हुकूमत क़ायम कर दी और 208हि॰ में अब्दुर्रहमान बिन अहमद अलवी की सरकरदगी में एक और तहरीक उभर आयी।

ये तमाम तहरीकें और इन्क़ेलाबात बताते हैं कि शिया मज़बूत और ज़ालिम व जाबिर हाकिमों के लिए ज़बरदस्त ख़तरा थे।

ख़िलाफ़ते अब्बासिया को अच्छी तरह मालूम था कि इमाम रिज़ाअ॰ और इमाम जवादअ॰ मुसलमानों में बेहद मक़बूल और महबूब हैं।

तारीख़ में बहुत से शवाहिद ऐसे मिलते हैं जिनसे ज़ाहिर होता है कि कमज़ोर अवाम की अज़ीम अक्सरियत की हमदर्दियाँ पूरे आलमे इस्लाम में शिया अइम्मा और शीईयत के साथ थीं। तबरिसी नक़्ल करता है कि हुसैन बिन हसन जो अलवी इन्क़ेलाबियों में थे और ''वाली'' के नाम से मशहूर थे, हज के ज़माने में जब मक्का आये तो मैंने देखा कि ख़िलाफ़ते अब्बासिया के गवर्नर दाऊद बिन ईसा ने पहले तो इनसे जंग का इरादा किया मगर फिर इस ख़याल से बाज़ आ गया। बक़ौल तबरी वह डर गया कि हज के ज़माने में मुख़तलिफ इलाक़ों से आये हुए हज़ारों मुसलमानों की मौजूदगी में अगर वह ऐसा करता है तो सारे के सारे मुसलमान शिया सरदार की हिमायत में उठ खड़े होंगे। (तबरी, जि-7 पेज-121)

ये एक तारीख़ी गवाह है जो वज़ाहत के साथ ज़ाहिर करता है कि खिलाफ़ते अब्बसिया इस बात से आगाह थी कि अवाम की अकसरियत शियों की हामी थी।

इन हालात में शिया इन्क़ेलाबी ताक़त और अवाम में अइम्म-ए-अहलेबैत की महबूबियत के पेशेनज़र मामून मजबूर था कि इमामे रिज़ाअ॰ को अपना वलीअहद मुक़र्रर करे और ये एलान करे कि हम सियासी इक़्तेदार उसके सही हक़दार यानी अइम्म-ए-अहलेबैत की जानिब मुन्तक़िल कर रहे हैं। इमाम रिज़ाअ॰ की वलीअहदी 201हि॰ में अमल में आयी। हक़ीक़त में मामून का अमल एक तरफ तो शिया तहरीक और इन्क़ेलाब को दफ़ा करने की चाल थी, दूसरी तरफ वह अइम्मा की मक़बूलियत से सियासी फ़ायदा हासिल करना चाहता था मगर इमामे रिज़ाअ॰ की वली अहदी से हुकूमत पर ये हक़ीक़त रौशन हो गयी कि शियों की हरदिल अज़ीज़ी नीज़ सियासी और अवामी क़ुव्वत बढ़ती जा रही है और सियासी नुक़त-ए-नज़र से शिया जो पहले की बनिस्बत इस्लामी मआशरे के क़वी तरीन उन्सुर बन चुके थे इमामे रिज़ाअ॰ की वली अहदी के बल बूते पर किसी वक़्त भी इक़्तेदार पर क़ब्ज़ा जमा सकते हैं। यही वजह थी कि हुकूमत ने इमाम रिज़ाअ॰ को ज़हर दिलवाया और तीन इमामों को एक के बाद एक यानी इमाम मुहम्मद तक़ीअ॰, इमाम अली नक़ीअ॰ और इमाम हसन असकरीअ॰ को क़ैदो बन्द की ज़िन्दगी गुज़ारनी पड़ी। मामून की सियासी रविश की ख़ुसूसियत ये थी कि वह क़ुव्वत से ज़्यादा ''दिखावे'' पर भरोसा करता था।

इमाम मुहम्मद तक़ीअ॰ के मुक़ाबले में मामून की तीन तरफ़ा चाल

इमाम रिज़ाअ॰ की शहादत के बाद, इमाम जवादअ॰ के मुक़ाबले में मामून ने तीनतरफ़ा चाल इख़्तियार की। पहले इमाम से अपना नसबी ताल्लुक़ ज़ाहिर करके उनकी मक़बूलियत और महबूबियत को अपने मफ़ाद में इस्तेमाल करना चाहता था। इसकी इसी सियासत ने

अपनी बेटी ''उम्मुल फ़ज़्ल'' का अक़्द इमाम जवाद[अ०] से करने पर उकसाया। मामून का ये इक़दाम इमाम रिज़ा[अ०] के अवामी असर व नुफ़ूज़ को ज़ाहिर करने के लिए काफ़ी है कि मामून जैसा साहेबे इक़्तेदार ख़लीफ़ा अपनी ख़िलाफ़त और अपने इक़्तेदार के तहफ़्फ़ुज़ की ख़ातिर इस बात पर मजबूर हो गया कि इमाम से नसबी क़राबत ज़ाहिर करे।

मामून की दूसरी सियासत ये थी कि वह बराबर इमाम को अपनी नज़रों के सामने बतौर क़ैदी रखना चाहता था ताकि उनकी हरकात व सकनात की पाबन्दियाँ आयद रखे और वह अपने अवामी असर व नुफ़ूज़ और मक़बूलियत के सहारे हुकूमत के ख़िलाफ़ कोई इन्क़ेलाब बरपा न कर सकें और जैसा कि किताबों में आया है मामून का इमाम मुहम्मद तक़ी[अ०] को अपनी दामादी में लेने का मक़सद एक हिफ़ाज़ती इक़्दाम भी हो सकता है। इस तरह वह चाहता था कि घरेलू माहौल में भी इमाम के हरकात व सकनात पर कड़ी नज़र रखी जाए। इमाम जवाद[अ०] का उम्र भर इस तरह हुकूमत की कड़ी निगरानी में रहना इस बात का शाहिद है कि अब्बासियों को इमाम से बहुत ज़्यादा डर और ख़ौफ़ था।

तीसरी बात, मामून इस कोशिश में था कि इमाम की रूहानी शबीह को मिटा दे ताकि अवाम में उनका असर व नुफ़ूज़ कम हो जाए। इमाम मुहम्मद तक़ी की इमामत के आग़ाज़ में मामून ने दरबार में जो मुनाज़रे कराये और जिनमें इल्मुल कलाम, फ़िक़्ह और फ़लसफ़े के ज़बरदस्त माहिरों से इमाम का मुक़ाबला कराया, उनका मक़सद यही था। मामून को उम्मीद थी कि इमाम जवाद जो उम्र के लेहाज़ से कमसिन थे, उन तजरबाकार और पेशेवर मुनाज़िरबाज़ों से शिकस्त खा जायेंगे और हुकूमत उनकी शिकस्त को उनकी कम इल्मी और फ़िक्री कोताही के तौर पर मशहूर करके उनकी अवामी मन्ज़िलत को हिला दे। चुनानचे इसी सिलसिले में एक तारीख़ी मुनाज़रे में मामून ने यहया बिन अक्सम को आमादा किया कि वह इमाम से सख़्त क़िस्म के सवालात करे मगर वह इमाम के मन्तिक़ी इस्तेदलाल के सामने बेबस हो गया। मामून इस हक़ीक़त से अन्जान था कि वह खुदाई रहबर हैं और मलकूती इल्म के सरचश्मे से बराहे रास्त कस्बे फ़ैज़ करते हैं।

मामून की मौत के बाद मुअ्तसिम के बरसरे इक़्तेदार आते ही इमाम के लिए ज़ुल्म और तशद्दुद में इज़ाफ़ा हो गया। मामून ने धोके और मक्कारी का उसूल अपनाया था मगर मुअ्तसिम ताक़त इस्तेमाल करने का क़ायल था चुनानचे उसके ज़माने में शियों पर ज़ुल्मो जौर और उनके क़त्ल और ख़ून में इज़ाफ़ा हो गया और मुअ्तसिम की ही साज़िश के नतीजे में ''उम्मुल फ़ज़्ल'' ने 220[हि०] में इमाम को ज़हर देकर शहीद कर दिया।

इमाम अली नक़ी अ0 : मुतवक्किल से मुक़ाबले के सूरमा

दसवें इमाम का नाम ''अली'', कुनियत ''अबुलहसन'' और लक़ब ''नक़ी'' और ''हादी'' था। आपकी विलादत 214[हि०] में मदीने में हुई। आपके मुबारक सर पर सिर्फ़ छः साल तक इमाम जवाद[अ०] के शफ़क़ते पिदरी का साया रहा। इमाम जवाद यानी हज़रत मुहम्मद तक़ी[अ०] की इराक़ जिलावतनी और आपकी शहादत के बाद उम्मत की रहबरी की अज़ीम ज़िम्मेदारी का बार आप ही के कन्धों पर आ पड़ा।

मुअ्तसिम की ख़िलाफ़त में आपकी इमामत का दौर शुरु हुआ। 228[हि०] में मुअ्तसिम की मौत हुई और इसके बाद वासिक़ बिल्लाह तख़्तनशीन हुआ। इसकी मौत के बाद खुलफ़ाए अब्बासिया का बड़ा ज़ालिम और जाबिर ख़लीफ़ा बरसरे इक़्तेदार आया। वह 250[हि०] तक ज़िन्दा रहा। इमाम के मुक़ाबले में हुकूमत की चाल मुतवक्किल के तारीक दौर में खुलकर सामने आयी।

ज़माने, नतीजों और हालात के लेहाज़ से इमाम हादी[अ०] का दौर इमाम जवाद[अ०] के दौर से मिलता-जुलता है। मुतवक्किल के बरसरे इक़्तेदार आते ही अब्बासी हुकूमत का ज़ुल्म तरक़्क़ी की आख़री मंज़िल पर पहुँच गया। शियों को जो अब्बासियों के ज़ुल्मो सितम और फ़साद के मुक़ाबले पर एक जंगी मोर्चा तैयार किये हुए थे, हुकूमत ने ख़त्म कर देने का इरादा किया। शिया भी अब्बासी हुकूमत को हिलाने का कोई मौक़ा हाथ से जाने नहीं दे रहे थे। यहाँ तक कि मुतवक्किल के दौर से क़ब्ल 219[हि०] में मुहम्मद बिन क़ासिम बिन उमर बिन अली बिन अबी तालिब ने आख़री और सबसे बड़ा शीआी इन्क़ेलाब बरपा किया। मुहम्मद बिन क़ासिम का इन्क़ेलाब ''रिक़्क़ा'' के इलाक़े से शुरु हुआ। चालीस हज़ार जंगजू

शिया उनके साथ थे। मुहम्मद बिन क़ासिम ने अपना मरकज़ ख़ुरासान में "मर्व" के मक़ाम पर कोहे हरीर के क़िले हसिया में मुन्तक़िल किया फिर उसके बाद तालिक़ान को अपना मरकज़ बना लिया। उन्होंने तालिक़ान ही को अपना ठिकाना बना लिया और ईरानी इलाक़ों के लोग उन से मुन्सलिक हो गये। ख़लीफ़ा मुअ्तसिम ने हुसैन बिन नूह की सरकरदगी में इन्क़ेलाबियों की सरकोबी के लिए फ़ौजें भेजीं। मगर उसकी फ़ौजें इन्क़ेलाबी मुसलमानों की क़ुव्वते ईमान से मुक़ाबले की ताब न ला सकीं और एक ख़ूँरेज़ जंग में बुरी तरह शिकस्त खाकर तितर-बितर हो गयीं। इसके बाद जंगों में भी जो फ़ौजें नूह बिन हयान बिन जबला और इब्ने ताहिर हाकिमे शहर की सरकरदगी में शिया इन्क़ेलाबियों की सरकोबी के लिए भेजी गयीं, शिया इन्क़ेलाबियों के हाथों शिकस्त खाकर वापस भाग गयीं। कुछ महीनों तक पूरे इलाक़े पर शिया इन्क़ेलाबियों का मुकम्मल क़ब्ज़ा रहा। इसके बाद दुश्वारियों और ज़हमतों का सामना करने के बाद अब्बासी हुकूमत इन्क़ेलाबियों की सरकोबी और क़ाएदे इन्क़ेलाब पर क़ाबू पाने में कामयाब हो सकी।

ज़ुल्म व इस्तेबदाद, फ़साद और इन्हेराफ़ के ख़िलाफ़ शियों के मुतावातिर और मुसलसल मुक़ाबले ने फ़ितरी तौर पर अब्बासी हुकूमत को इस बात पर मजबूर कर दिया था कि शिया अइम्मा को अपनी सख़्त निगरानी में रखे या उन्हें क़ैद में डाल दे और ज़्यादा से ज़्यादा उन पर ज़ुल्म व तशद्दुद करे।

तारीख़ी शवाहिद के मुताले से ज़ाहिर होता है कि इमाम जवाद की शहादत के बाद हुकूमते अब्बासी इमाम हादी से जो मुसलमानों की मानवी, फ़िक्री और इज्तेमाई रहबरी का फ़र्ज़ अन्जाम दे रहे थे बेहद हरासाँ थी। तारीख़ी मत्न में मन्क़ूल है कि मक्के और मदीने के इमामे जमाअत ने हुकूमत के नुमाइन्दे की हैसियत से मुतवक्किल को लिखाः "अगर तुम्हें मक्के और मदीने की ज़रूरत है तो अली बिन मुहम्मद (हादी) को इस इलाक़े से हटा ले जाओ क्योंकि उन्होंने इस इलाक़े के बेशतर लोगों को अपनी ताक़त और असर में ले रखा है।"

हुकूमते अब्बासी के दूसरे कारिन्दों ने भी दीगर मक़ामात से ख़लीफ़ा को इमाम हादी के बारे में इसी तरह की ख़बरें भेजीं जो अइम्मा की अवाम में महबूबियत और मक़बूलियत की मज़हर हैं। बग़दाद के महल में रहने वाले ज़ाहिरी इक़्तेदार के मालिक ख़लीफ़ा का इक़्तेदार दारुलहुकूमत के इलाक़ों तक महदूद था और उसके मुक़ाबले में मस्जिदुन्नबी में बैठने वाला और जनाब फ़ातिमा[स०] की मिट्टी के घर में रहने वाला अवाम की अकसरियत के दिलों पर हुकूमत कर रहा था। दूसरी बात ये है कि इससे ये हक़ीक़त भी मुनकशिफ होती है कि अइम्म-ए-उम्मत की मानवी व फ़िक्री रहबरी के फ़र्ज़ की अन्जामदही के साथ ही साथ सियासी तहरीक से भी ग़ाफ़िल नहीं थे। इस बात का ज़्यादा इमकान है कि तमाम इस्लामी हुकूमत के इन्क़ेलाबी शिया अपने रहनुमाओं के ज़रिये से अइम्मा ही से रहबरी हासिल करते थे और इसी मसले ने हुकूमत को इस हद तक अपनी तरफ मुतवज्जेह किया कि उसे अपनी आफ़ियत और अपना वजूद ख़तरे में महसूस होने लगा और मक्का और मदीना हाथ से जाता हुआ नज़र आने लगा। आख़िरकार नतीजा ये हुआ कि हुकूमत ने इमाम हादी[अ०] को जिलावतन करके सामर्रा के महल्ल-ए-असकर में हुकूमत के कारिन्दों की निगरानी में बीस साल तक रखा और इसमें कोई शक नहीं कि इन इक़दाम का सबब अवाम में इमाम का नुफ़ूज़ उनकी मक़बूलियत और उनका मुक़ाबले वाला किरदार था।

हुकूमत को इमाम हादी[अ०] को अपनी निगरानी में रखना पड़ा क्योंकि इमाम की मक़बूलियत अवाम में इस हद तक बढ़ गयी थी कि दारुलख़िलाफ़ा के बहुत से मक़ामात के लोग इमाम हादी की मानवियत के दीवाने हो गये थे। सुबूत के तौर पर हम इस वाक़िए को नक़्ल करते हैंः मुतवक्किल ने यह्या बिन हरैमा को मदीने से इमाम को सामर्रा लाने पर लगाया था। चुनानचे यह्या बिन हरैमा कहता है कि "जब मैं बग़दाद आया तो वालिए बग़दाद इसहाक़ बिन इब्राहीम ताहिरी ने मुझ से सिफ़ारिश की कि अगर अली इब्ने मुहम्मद तक़ी की ख़ाना तलाशी के मौक़े पर तुम्हें कुछ नज़र आया हो तो मुतवक्किल से न कहना और सामर्रा में भी मुतवक्किल के आदमी वसीफ तुर्की ने उनके हक़ में सिफ़ारिश की, इस बात से मुझे सख़्त ताज्जुब हुआ।"

तारीख़ी इस्नाद से ज़ाहिर होता है कि दारुलख़िलाफ़ह के कारिन्दे तक इमाम के हामी हो गये थे इन्हीं मसाएल ने हुकूमत को इमाम से इतना ख़ौफ़ज़दा कर दिया था कि मुतवक्किल ने बीस बरस तक अपनी ख़ुसूसी निगरानी में रखने के बाद ज़हर देकर उन्हें शहीद कर दिया।